International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 5; September 2018; Page No. 58-62

''भागीरथी–गंगा और कादम्बरी'' खण्डकाव्य में मौलिक उद्भावनाएँ

डॉ0 दीपा त्यागी
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, इस्माईल नेशनल महिला पी0जी0 कॉलिज, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश
भारतीय संस्कृति की मेरुदण्ड स्रोतस्विनी गंगा आध्यात्मिकता का प्रतीक होने के साथ–साथ आर्थिक दृष्टि से भी जनमानस का उपकार करने वाली है। वर्तमान समय में विडम्बना भरा जीवन व्यतीत करने वाली गंगा की स्थिति नारी समान ही है। भगीरथ की पुत्री गंगा धरा पर आने के पश्चात् रोगनाशिनी मोक्षदायिनी तो कहलायी परन्तु धरा के मानव ने अपने अंधविश्वास एवं भोगविलास पूर्ण जीवन के कारण कुरूप बना दिया। पिता के समान भगीरथ उसके सुखद जीवन के लिए कल्पना करते हैं परन्तु उसकी दुर्दशा पर आहत मन होकर साथ चलने का आग्रह करते है।
प्रस्तुत खण्डकाव्य में भगीरथ के गंगा के प्रति भाव वात्सल्य से परिपूर्ण हृदय वाले पिता के भाव हैं और साथ ही कन्या भ्रूण हत्या, यौन शोषण जैसे कुकृत्यों पर कटाक्ष है। यत्र तल अनाचार भ्रष्टाचार, अन्याय आदि पर भी तीक्ष्ण प्रहार है। विभिन्न युगों में व्याप्त दुराचारियों पर कवयित्री ने कलम से तंज कसा है। प्रस्तुत खण्डकाव्य में गंगा वर्णन में कवयित्री की मौलिक उद्भावनाएँ हैं।

मूल शब्द : भारतीय संस्कृति, भगीरथ, गंगा, कादम्बरी, मोक्षदायिनी।

प्रस्तावना
भारत भूमि की सर्वप्रधान स्रोतस्विनी गंगा एक ओर भारतीय जनमानस की आध्यात्मिकता का प्रतीक है वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिकों के लिए कौतुहलपूर्ण एवं जिज्ञासामयी, और क्यों न हो ? असंख्य मलिनता एवं कीटाणुओं का स्रोत नाला जब पावन 'गंगा' में समाहित होता है तो गंगामय बन जाता है, उतना ही पावन पवित्र एवं कीटाणुनाशक। अजस्र प्रवाहिनी गंगा को पुराणों में पापनाशिनी, मोक्ष प्रदायिनी, महानदी आदि कहकर संबोधित किया गया है। आदि शंकराचार्य ने गंगा को 'त्रिभुवन माता' कहकर संबोधित किया। भक्तिकालीन कवियों सूरदास, तुलसीदास की गंगा पापों का उद्धार करने वाली है। सेनापति की गंगा पाप की नाव को नष्ट करनी वाली पुण्यधारा रूपी तलवार है। 'सैकत शय्या पर दुग्ध धवल तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म विरल, लेटी है श्रान्त, क्लान्त निश्चल।'' प्रकृति प्रेमी पंत गंगा के अपार सैन्दर्य पर आकर्षित होकर उसका आहलादकारी वर्णन करते हैं।
प्राणियों का उद्धार करने वाली गंगा को आज जनमानस ने ही विषैला और कुरूप बना दिया है, कुछ अपनी अंध–भक्ति के वशीभूत होकर तो कुछ भोग विलास पूर्ण जीवन शैली के कारण तभी तो वर्तमान समय में साहित्यकार के दृष्टिपथ में 'गंगा' का कारुणिक रूप उभर कर आता है। मानव जाति पर उपकार करने वाली गंगा उत्तर भारत की अर्थव्यवस्था का भी मेरूदण्ड है तथा भारत वर्ष और हिन्दी साहित्य की मानवीय चेतना को प्रवाहित करती है।
प्राचीन परम्परा का पालन
मेरे शोध पत्र का विवेच्य विषय है डॉ साधना सहाय द्वारा रचित खण्डकाव्य 'भागीरथी–गंगा और कादम्बरी में मौलिक उद्भावनाएँ' प्रस्तुत खण्डकाव्य सात सर्गों में विभाजित है। कवयित्री ने परम्परा का पालन करते हुए खण्डकाव्य का आरम्भ मंगलाचरण से किया है माँ गंगा की स्तुति निम्न शब्दों में की गयी है–

'ऋषिमुनि – प्रणन्दिता
चराचर – वन्दिता
आबालवृद्ध – पूजिता
भगीरथ – अभ्यर्चिता' ।''[1]

पौराणिक कथा के अनुसार राजा भगीरथ सगर के पुत्रों का उद्धार करने के लिए गंगा को पृथ्वी पर लेकर आये थे। प्रस्तुत खण्डकाव्य के प्रथम सर्ग 'भगीरथ–चिन्तन' में भगीरथ गंगा के वैभव का स्मरण करते हैं कि गंगे! तप्त हुए धरा को तुमने अपने जल द्वारा शीतलता प्रदान की, इतना ही नहीं अपितु सारे ब्रह्माण्ड की रक्षा की । सुरक्षा कवच प्रदान करने वाली श्वेत वसना गंगा नवयौवना के समान उमंगित होती हुई अपूर्व वैभव से सम्पन्न थी –

''नवयौवना सी राग युक्त उर्मियां
मादक गति से चलती थीं
देवों ने नतमस्तक हो तब
श्रद्धा से था नमन किया।''[2]

कवि जगन्नाथ रत्नाकर ने 'गंगावतरण' खण्डकाव्य में गंगा आगमन का मनोहारी वर्णन किया है। पृथ्वी तल पर प्रवाहित होती हुई गंगा की विचित्र चाल देखते ही बनती है। मार्ग में पड़ने वाले निर्जन वनों का प्राकृतिक सौन्दर्य अपूर्व है। हर्षोल्लास के कारण वनों के

बीच मानो संगीत समारोह हो रहा है–

''नाचत मंजुल मोर और साजत सारंगी,
करति कोकिला गान तान तानति बहुरंगी।''[3]

डॉ0 साधना सहाय जी ने भी धरा पर गंगा के आगमन पर वनस्पति, पक्षियों बाल, युवा, वृद्ध सभी को उल्लसित एवं प्रसन्नचित चित्रित किया है। गंगा का पृथ्वी तल पर प्रवाहमान होना धरा के प्रत्येक प्राणी के लिए आह्लादकारी था –

''दूर गांव–गांव से चलकर
मानव आते रहते हँसी ठिठोली भी करते
मेले लगते कुछ ऐसे देवी देवताओं से भरे
नन्दन कानन सजे हों जैसे।''[4]

मौलिक उद्भवनाएँ

'गंगा' का धरा पर पदार्पण तो हो गया पर एक पिता के रूप में भगीरथ की चिन्ताओं का अंत नहीं हुआ, य़द्यपि वे स्वयं परमपिता परमात्मा में लीन होने के लिए व्याकुल थे लेकिन ह्रदय में पुत्री मोह समाहित था कि एक बार उसे देख लूँ। एक साधारण पिता की भाँति पुत्री मिलन की आकांक्षा उन्हें व्यग्र कर रही थी। भाव–विभोर भगीरथ की मनः स्थिति को कवयित्री ने निम्न शब्दों में अभिव्यक्त किया है–

हर्षातिरेक से भावुक था
न जाने गंगा कैसी होगी?
पहले से अधिक फली फूली होगी
आनन्द मग्न औ उल्लसित होगी।''[5]

पिता अपनी पुत्री के सुखद जीवन की कल्पना करता हैं। उसकी वैभवता, सुख, संपन्नता की कल्पना करता है। पितृ हदय के स्वाभाविक भाव है जो पुत्री के प्रति उमड़ते हैं उसे प्रत्येक स्थिति–परिस्थिति में प्रसन्न देखना चाहते हैं। राजा भगीरथ भी पुत्री 'गंगा' के लिए मनोहारी कल्पना करते हैं कि वह कितनी पावन, प्रफुल्लित होगी, उसके आस–पास का वातावरण कितना स्वच्छ एवं आह्लादकारी होगा–

''चहुँ ओर स्वच्छता का साम्राज्य होगा
खेत खलिहानों पर दिव्य लावण्य होगा
पुष्प पराग पटवास का संसार होगा
अन्न और खाद्य पदार्थों का भंडार होगा।''[6]

इतना ही नहीं बल्कि पुत्री विशाल साम्राज्य की अधिष्ठात्री होगी तथा उसका सौन्दर्य स्वर्ग की अप्सरा जैसा होगा– ''गंगा स्वर्ग अप्सरा लगती होगी।''[7] इन प्रसंगों में कवयित्री की मौलिक उद्भावनाएँ हैं, पिता (भगीरथ) का पुत्री (गंगा) के लिए व्यग्र रहना, सुंदर कल्पनाएँ करना। वही पिता जब पुत्री की दयनीय अवस्था देखता है तो कितना पीड़ित होता है। कवयित्री ने एक पिता के रूप में भगीरथ की इसी आहत मनः स्थिति का चित्रण किया है। 'गंगा' के विषय में जो भी मनोहारी कल्पनाएँ की थीं, उसके सुखद जीवन के स्वप्न देखे थे वो स्वप्न ही रह गये। उसकी कारुणिक अवस्था उनमें अपार पीड़ा का संचार कर गयी –

''गला रूंध गया था, रूठ गया था
नेत्र अविरल अश्रुधारा बहा रहा था
वाणी जिह्वा का साथ छोड़ गयी थी
बड़ी मर्मान्तक पीड़ा हो रही थी।''[8]

द्वितीय सर्ग में कवायित्री ने 'गंगा' को दूषित, कलुषित करने वालों पर कटाक्ष किया है पुस्तक के प्राक्कथन नें उन्होंने लिखा है कि ''विडम्बना पूर्ण स्थिति यह है कि एक ओर तो हम गंगा का आदर – मान करते हैं किन्तु दूसरी ओर उसके पवित्र जल में कारखानों का उत्सर्जन, मृत देहों की राख तथा भाँति–भाँति का कूड़ा कचरा मिलाने से नहीं हिचकिचाते। यह कैसा दोहरा आचरण है? क्या आदर मान मात्र वाणी तक ही सीमित होना चाहिये।''[9] 'गंगा' के माध्यम से नारी के प्रति हो रहे अत्याचारों के विरूद्ध भी आवाज बुलन्द की गयी है। दीन–हीन पिता की भाँति भगीरथ पश्चाताप् करते हैं कि मैं क्यों तुम्हें इस लोक में लेकर आया ? इस लोक के प्राणी महापापी एवं घृणित हैं जो तुम्हारी शुचिता को भी सँजोकर नहीं रख सके। वे स्वयं को भी उत्तरदायी मानते हुए कहते हैं कदाचित मेरे कर्मों के परिणामस्वरूप ही आज 'गंगा' ऐसी दयनीय स्थिति में है–

''कमनीय रूप बना है विकृत
मधु नाद नहीं है झंकृत
कूड़ा कचरा यहाँ वहाँ है
मल और मैल सर्वत्र जमा है।''[10]

परिवार में एक पुत्री की कर्त्तव्यपरायणता, कर्मनिष्ठता, सरलता एवं त्याग भावना पर भी प्रकाश डाला है। घर आँगन को सजाने सँवारने वाली पुत्री दो कुलों की मान मर्यादा की रक्षा करती है। सर्वहितैषिणी 'गंगा' ऐसी ही पुत्री है तभी तो कवयित्री ने उसे 'कमलिनी, कुमुदिनी, कल्पवृक्ष, चिन्तामणि, बहुमूल्य हीरा आदि विविध नामों से संबोधित किया है। भगीरथ के 'गंगा' के प्रति भाव वात्सल्य से परिपूर्ण ह्रदय वाले पिता के भाव हैं और साथ ही कन्या के प्रति हो रहे घृणित कार्य एवं कन्या भ्रूण हत्या जैसे निन्दनीय कार्य पर भी कटाक्ष है। पुरुष सत्तात्मक समाज स्त्री को उपभोग की वस्तु समझकर पग–पग पर उसका तिरस्कार करता है मानो वह मानवी न होकर पुरुष की विश्रामस्थली हो। संसार को भावनात्मक सौन्दर्य प्रदान करने वाली स्त्री स्वयं विडम्बनाओं भरा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य है–

''सौन्दर्यपान को आतुर रहता
फिर भी तुझ से घृणा करता
माँ के गर्भ से ही तुझे
नष्ट करने को व्याकुल रहता।''[11]

गंगा एवं नारी दोनों की नियति एक समान हो गई है । संसार को हरीतिमा प्रदान कर सुख समृद्धि का संचार करने वाली, प्यासे को तृप्त करती हुई, रोगविनाशिनी गंगा निरन्तर प्रवाहमान रहती है। मार्ग में आने वाली विध्न बाधाओं को पार करती हुई जग को सर्वस्व न्यौछावर करती चलती है। भगीरथ गंगा से कहते है कि

''प्रवातों में भी तुम निश्छल रहीं/बवंडर की धुलि भी पीती गयीं।''[12] 'पिता–पुत्री मिलन' सर्ग में ही शीर्षक 'गंगा उवाच' में 'गंगा' समाज की विकृतियों को उद्घाटित करती हुई कहती है कि जिसका जैसा स्वभाव होता है वह वैसा ही कार्य करता है। दुर्जन सदैव दुर्जनता का आचरण करता है अपनी दुष्टता से सज्जन को कष्ट तो दे सकता है पर उससे प्रतिस्पर्धा करने में समर्थ नहीं हो सकता और वैसे भी सुख–दुख तो जीवन में अवश्यम्भावी हैं फिर उनसे कैसा विचलित होना ? जहाँ तक मेरे (गंगा) लक्ष्य का प्रश्न है, मुझे तो कर्मपथ पर निरन्तर प्रवाहमान रहना है।

राजा भगीरथ एवं गंगा के मध्य का वार्तालाप कवयित्री की मौलिक उद्भावना है। पौराणिक कथा को नवीन कलेवर प्रदान कर भावों की सुंदर अभिव्यक्ति की गयी है। 'शैशव स्मरण' में 'गंगा' अपने स्वर्णिम अतीत का स्मरण करती है कि भूलोक में आने से पूर्व वह कितनी प्रसन्नचित्त थी। किस प्रकार चाँद तारों के साथ अठखेलियाँ करती, किस प्रकार उसका गर्जन–तर्जन चाँद तारों में भय का संचार कर दिया करता था शिशु की भाँति क्रीडा करती हुई गंगा का मनोहारी वर्णन किया गया है –

''मैं नन्हीं सी मंदाकिनी
तड़ित चमका ढूँढा करती
बादलों को चीर–चीर कर
अठखेलियाँ किया करती।''[13]

गंगा की बाल सुलभ क्रीडाएँ–एक–दूसरे के साथ खेल खेलना, एक–दूसरे को डराना, क्रोधित हो जाने पर अथवा रूठने पर मनाना आदि सभी का वर्णन मौलिक है। ''मेरी उर्मियाँ विस्तार पा गयीं''[14] पंक्ति शैशवास्था के पश्चात् किशोरावस्था तत्पश्चात् युवावस्था के आगमन का संकेत है। विविध प्रकार की क्रीडाएँ करते हुए प्रत्येक अवस्था में गंगा के लिए भूलोक सदैव आकर्षण का केन्द्र रहा उसे जानने–देखने के भाव याद–कदा बनते रहे। हृदय में मातृत्व भाव होने के कारण ही धरा की पीड़ा, वन–उपवनों की जर्जरित अवस्था ने गंगा को मृत्युलोक में आने के लिए विवश किया–

''माँ जैसी मैं भावुक थी
सूखी धरती प्यासे जन–जन .....।''[15]

गंगा के माध्यम से कवयित्री ने धरा पर व्याप्त भ्रष्टाचार, व्यभिचार, धर्मान्धता, अर्थ की प्रधानता, राजनीतिज्ञों के मनमाने आचरण, न्याय प्रणाली आदि सभी पर प्रहार किया है। अनुचित मार्ग से धन अर्जित करने वाले व्यक्ति धनवान तो हो ही जाते हैं साथ ही गुणवान भी कहलाते हैं अगर सज्जन किसी चक्रव्यूह में फँस जाता है तो उसके समक्ष बाहर आने का कोई मार्ग नहीं बचता। भ्रष्टाचारियों की जमात ने समाज को खोखला बना दिया है। कवयित्री का पीड़ित मन कह उठता है–

''सत्ताधीशों की है चलती
मवालियों की है यह नगरी
सज्जन कारागार मैं सड़ता
निरपराध बेड़ियों में जकड़ता।''[16]

इतना ही नहीं अपितु सहज सरल, साधु, स्वभाव के मानव दुःख एवं यातना भरा जीवन व्यतीत करते हैं। चक्रव्यूह में फँसा हुआ साधारण जन यदि न्याय की शरण में चला भी जाये तो भी कोई लाभ नहीं क्योंकि कानून केवल मात्र अंधा ही नहीं, गूंगा और बहरा भी है मुट्ठी भर ज्ञानी हैं तो, पर वे भी मौन धारण कर लेते हैं। ऐसे ही ज्ञानियों के प्रति कवयित्री आक्रोशित है। 'भगीरथ और गंगा का वार्तालाप' शीर्षक के अन्तर्गत पिता भगीरथ पुत्री गंगा को रोगनाशिनी मोक्षदायिनी कहकर संबोधित करते हैं। गंगा को यह संबोधन असह्य है आज वह अपना अस्तित्व सुरक्षित रखने के लिऐ संघर्षरत है। राजा भगीरथ व्यथित है कि कितने परिश्रम के फलस्वरूप यह बहुमूल्य रत्न प्राप्त हुआ किन्तु भूलोक ने इसे दूषित एवं मलिन बना दिया । 'मोक्षदायिनी' संबोधन से आहत गंगा अपनी पीड़ा निम्न शब्दों में प्रकट करती है–

''जो स्वयं जकड़ी हो श्रृंखलाओं में
वो क्या भव तारिणी कहला सकती
विलुप्त हुयी मेरी शीतलता
न बची मुझमें अब शुचिता।''[17]

पुत्री 'गंगा' की पीड़ा जहाँ एक ओर पिता भगीरथ को पीड़ित करती है वहीं दूसरी ओर वे उसे (गंगा) उसकी गुणवत्ता से परिचित कराते हुए कभी तो जीवन ज्योति जगाने वाली, कभी ताल तलैया को हरा–भरा करने वाली, कभी रस मटकी, तो कभी प्रत्येक स्थिति में समभाव रहने वाली बताकर सांत्वना देने का प्रयास करते हैं, उनके भीतर व्यथा का सागर हिलोरे ले रहा है, तभी तो तत्क्षण विलाप करने लगते हैं –

''ढोती रही जग की निकृष्टता
तुम होती गई जर्जर
नहीं रहा नीर सुंदर
मंगल रूप बना भयंकर।''[18]

पुत्री स्नेह से भाव–विभोर भगीरथ यही कहते हैं कि ''धरा नहीं रही रहने योग्य/भाव शेष बचा बस भोग्य।''[19] 'शैशव स्मरण' के अन्तर्गत गंगा का बालसुलभ क्रीडा करना, अपने स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान (भूलोक) पर आने पर विकृत स्वरूप वाली होना आदि सभी कवयित्री की मौलिक उद्भावनाएँ हैं। गंगा' के समान नारी भी जब पितृ छाया में रहती है तो स्वयं को सुरक्षित अनुभव करती है, पिता की क्रोड से निकलकर जब नवजीवन में प्रवेश करती है तो स्वयं को असहाय समझती है और समाज भी नारी की शारीरिक दुर्बलता का लाभ उठाकर उसे अपवित्र करने का प्रयास करता है। एक नारी पुत्री, बहिन, पत्नी, माँ बनकर जिस समाज का पोषण करती है वही समाज उसे प्रताड़ित करने का कोई अवसर नहीं छोड़ता। इस प्रकार कवयित्री ने गंगा के माध्यम से वर्तमान में नारी की स्थिति पर भी प्रकाश डाला है।

चतुर्थ सर्ग में कवयित्री ने 'कलि निन्दा' के माध्यम से समाज में व्याप्त दुर्जनता, धार्मिक विकृति, कर्महीनता, कर्त्तव्यहीनता, पापाचार का ताण्डव, चोरी एवं पीड़ित मानवता का वर्णन किया है। राजा भगीरथ कलियुग निन्दा करते हुए कहते हैं –

''प्रेमरस की बूँद नहीं
कर्मठता की ढूँढ नहीं
पर स्त्री का हरण करता
उसका सर्वस्व हर ने को।''[20]

चारों युगों में कलियुग को निम्न कोटि का बताया है। कलियुग में मानव–मानव का शत्रु बन गया, बन्धुत्व की भावना का पूर्णतः ह्रास हो गया है। कविवर तुलसीदास जी ने भी कलि निन्दा की है साथ

ही भवसागर से पार जाने का उपाय भी बताया है। प्रस्तुत खण्डकाव्य में भगीरथ कलि निन्दा करते हुए आवेश के वशीभूत होकर गंगा को प्रलयकारी रूप धारण करने के लिए कहते हैं और साथ ही नाक लोक वापिस चलने का आग्रह करते हैं। उनका कहना है कि मानव जाति अपने–अपने स्वार्थों में रत है तुम्हारी शक्ति को नहीं पहचान रही है, यदि तुम चाहो तो धरा पर हाहाकार मचा सकती हो, अहंकारी मानव के अहंकार को क्षण भर में चूर–चूर कर सकती हो–

''उनको जग का हाल दिखा दो
खेती बाड़ी खेत खलिहान सब
आवर्तों भंवरों में फंसा दो
निज लहरों की ताकत दिखला दो।''[21]

भगीरथ का पुत्री की भांति गंगा को समझाना और गंगा द्वारा वापिस न जाना आदि सभी प्रसंग कवयित्री की मौलिक उद्भावनाएँ हैं।

सर्ग पाँच में 'कलियुग का पदार्पण' में कलि द्वारा अपना परिचय इस प्रकार दिया गया है– 'नहीं अभिलाषी हूँ बनने को सत्ययुग/कहलाता हूँ मैं तम का साथी कलियुग।''[22] कलियुग अन्य युगों में भी व्याप्त अनाचार, स्त्री अपमान, सदाचारी के प्रति दुर्व्यवहार पर प्रकाश डालते हुए स्वयं को 'अभागा कलि' संबोधित करता है। इसी सर्ग में कलि गंगा के महत्व को उद्घाटित करते हुए संदेश देता है–

''यह जीवन की प्रथम साक्षी
मृत्यु समय भी यही साथी
इस जैसा न प्राणवान्
मनः शुद्धि इसका अभियान।''[23]

कलियुग द्वारा स्वयं को औद्योगिक विस्तार वाला, नए अन्वेषणों वाला काल बताया जाना, गंगा के महत्व पर प्रकाश डालना, उसे सुकुमार जीवन प्रदायिनी मानना तथा संसार को संदेश देना–ये सभी प्रसंग वर्तमान समय की स्थिति परिस्थिति को केन्द्र पर रखकर ही कवयित्री द्वारा वर्णित किये गये हैं कहने का अभिप्राय है कि कवयित्री की मौलिक उद्भावनाओं के परिचायक हैं।

'पीड़ा अवतरण' सर्ग में कलि के भीतर समाहित पीड़ा का मानवीकरण है। ''कलि से बाहर निकल बोली पीड़ा।''[24] पंक्तियों से ही सर्ग का आरम्भ हुआ है। कलि की सबसे बड़ी विडम्बना है कि उसे धिक्कार ही मिलता है। सभी प्रकार के व्यसनों, भ्रष्टाचार, अनिष्टता वाला कहकर ही उसे संबोधित किया जाता है जबकि सतयुग हो या त्रेतायुग अथवा द्वापर सभी में अनाचार विद्यमान रहा है किसी भी युग का प्राणी व्यसनों से अछूता नहीं रहा। द्यूत क्रीडा, मद्यपान, परस्त्रीगामी, दुराचारी कब, किस युग में नहीं हुए–

''अछूता नहीं रहा तन मन
शूर्पणखा हो या हो कंस छल
किसने किया न प्रलाप अनर्गल
बकवादी हर युग में शेष।''[25]

कलि पीड़ा प्रत्येक युग में व्याप्त आसुरी वृत्तियों का बोध कराती हुई स्वयं को अपने पराये की पहचान करने वाली बताती है। पीड़ा का भगीरथ से वार्तालाप गंगा को देखकर चिन्तातुर होना आदि प्रसंग मौलिक हैं। उसकी (गंगा) दयनीय अवस्था ही कलि के प्रति दुर्भावना से परिपूर्ण थी। वर्तमान समय में मानव ने अंधविश्वास में पड़कर विविध प्रकार के चढ़ावे चढ़ाकर उसे दूषित बना दिया है। एक ओर औद्योगिकरण है तो दूसरी ओर अंधविश्वास। गंगा में वैक्टीरियोफेज नामक विषाणु पाये जाते हैं जिनके कारण दूसरे हानिकारक सूक्ष्म जीव जीवित नहीं रह सकते लेकिन मानवीय अंधास्था, भौतिकवादिता, भोग–विलास आदि ने गंगा की क्षमता को नष्ट करने का प्रयास किया है।

अन्तिम सर्ग में कादम्बरी (सरस्वती) कलियुग को संबोधित करती हुई वर्तमान समय के भ्रष्ट राजनेता, पाखण्ड नौकरशाही, चापलूस वर्ग, चाटुकारिता एवं जाति, धर्म, वर्ण भेदभाव को प्रश्रय देने वालों पर तीक्ष्ण कटाक्ष करती है। ऐसे विषाक्त वातावरण में कोई कैसे पावन बनकर जीवन यापन कर सकता है ? कादम्बरी अपराध बोधग्रस्त कलि से कहती है–

''ना कोई महान है ना कोई मध्यम
ना कोई त्याज्य है या अधम
सबकी अपनी–अपनी पीड़ाएं
गाथाएं कहती अनगिन क्रीडाएं।[26]

पुत्री स्नेही, व्यथित भगीरथ से कादम्बरी कहती है कि ''क्यों कहते हो कलियुग तामसी है.....क्या कलियुग में राम छटा नहीं विराजती ?''[27] धरती माँ प्रत्येक युग में अपनी संतान के भरण–पोषण के लिए अन्न प्रदान करती है, वृक्ष फल–फूल निःस्वार्थ भाव से देते हैं, क्या परिवर्तित हुआ है? प्रकृति तो सदैव से ही परिवर्तनशील रही है पुरातनता का परित्याग करके नवीन को धारण करती है। यह परिवर्तन प्रत्येक युग में दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार समय परिवर्तन के साथ–साथ नवीन विचारों का आगम होता है। मनुष्य का लक्ष्य भी यही है कि कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर रहे, पथ में प्राप्त होने वाले सुख–दुख को स्वीकार करते हुए निरन्तर गतिमान रहे।

कादम्बरी द्वारा प्रदत्त ज्ञान के पश्चात् राजा भगीरथ कलियुग से कहते हैं कि मैं तुम्हारे विषय में अनभिज्ञ था, तुम्हारे कलुषित स्वरूप से ही मेरा परिचय रहा जबकि वास्तविकता कुछ और है। एकमात्र तुम ही दोषी नहीं हो। भगीरथ कादम्बरी से ज्ञान प्राप्त करके तथा कलियुग के प्रति द्रवित होते हुए कहते हैं –

''सुना सुनाया किया वमन
पर अब तुमको है नमन...।''[28]

इन्हीं शब्दों के साथ भगीरथ धरा से प्रस्थान कर गये। कलियुग भी जीवन की विडम्बनाओं एवं स्वयं के प्रति संसार की गलत धाराणओं पर विलाप करते हुए कहता है कि ये जग मुझ से भी अधिक काला है। गंगा भी धरा की विषाक्तता से खिन्न होकर अपने पिता के साथ धरा से प्रस्थान कर गई। ''नहीं शेष बचा था अब कुछ/मटियामेट हुआ अब सब कुछ।''[29] इन पंक्तियों के माध्यम से कवयित्री ने प्रलय की ओर संकेत किया है। कादम्बरी द्वारा ज्ञान देना, भगीरथ का कलियुग से कहना और फिर भगरीथ एवं गंगा का प्रस्थान आदि सभी प्रसंग कवयित्री की मौलिक उद्भावनाएँ हैं।

भारतीय जनमानस ही नहीं अपितु विदेशी भी 'गंगा' के प्रति सदैव आकृष्ट रहें हैं। तुगलक वंश के शासक मुहम्मद बिन तुगलक, अकबर, औरंगजेब आदि शासकों की गंगा जल के प्रति गहरी आस्था थी यद्यपि उनकी आस्था के पीछे स्वार्थ निहित था। कारण भी है गंगा को हिमालय का अमृत रस कहा गया है। वहाँ की रासायनिक गुणवत्ता गंगा में सम्मिलित हो जाती है इसी गुणवत्ता से शासक प्रभावित थे। इसके अतिरिक्त आर्थिक दृष्टि से भी गंगा

के लाभ थे और हैं लेकिन भारत में गंगा उपेक्षा भरा जीवन व्यतीत कर रही है अर्थात् उसे कलुषित कर बदरूप बनाया जा रहा है। गंगा को पतित पावन बनाने के लिए संघर्षरत प्रो0 जी0 डी0 अग्रवाल ने भी अपने प्राणों का विसर्जन कर दिया है। उनका बलिदान सभी भारत वासियों के लिए प्ररेणास्पद है हम उनके संघर्ष को जारी रखते हुए 'गंगा' को उज्ज्वल एवं शुद्ध बनाये रखने में योगदान दे सकते हैं।

डॉ0 साधना सहाय जी ने गंगा के विडम्बनापूर्ण जीवन के चित्रण के साथ–साथ उसकी गुणवत्ता पर भी प्रकाश डाला है। निसंदेह गंगा की पावनता शुद्धता बनाये रखने के लिए किये जा रहे प्रयास की एक छोटी सी कड़ी यह खण्ड काव्य भी है।

संदर्भ

1. डॉ0 साधना सहाय – भागीरथी– गंगा और कादम्बरी–मंगलाचरण
2. वही, पृष्ठ 6
3. जगन्नाथ रत्नाकर – 'गंगावतरण' सर्ग 10 छंद 14
4. डॉ0 साधना सहाय–भागीरथी–गंगा और कादम्बरी–पृ0 27
5. वही, पृ0 33
6. वही, पृ0 34
7. वही, पृ0 35
8. वही, पृ0 36
9. डॉ0 साधना सहाय भागीरथी–गंगा और कादम्बरी प्राक्कथन, पृष्ठ X
10. वही, पृ0 42
11. वही, पृ0 51
12. वही, पृ0 53
13. वही, पृ0 59
14. वही, पृ0 68
15. वही, पृ0 70
16. वही, पृ0 75
17. वही, पृ0 79
18. वही, पृ0 83
19. वही, पृ0 86
20. वही, पृ0 88
21. वही, पृ0 93
22. वही, पृ0 106
23. वही, पृ0 132
24. वही, पृ0 136
25. वही, पृ0 145
26. वही, पृ0 154
27. वही, पृ0 156
28. डॉ0 साधना सहाय–भागीरथी–गंगा और कादम्बरी पृ0 166
29. वही, पृ0 170